ईसरो के विज्ञानिक डॉ. पी. एस ठक्कर के अनुसार प्राचीन नगर के स्वरूप चौकोर आयताकार, स्वस्तिक, अर्धचन्द्रकार और वलय आकार में होते थे। वास्तु शास्त्र के अनुसार भी नगर की रचना स्वस्तिक सर्वतोभद्र, नन्दावर्त आदि आकार के अनुसार की जाती थी।

Create PDF files without this message by purchasing novaPDF printer (http://www.novapdf.com)

भारतीय दूर संवेदन उपग्रह की सहायता से पृथ्वी की जो तस्वीर मिलती है उससे यह पता चलता है कि अति प्राचीन नगरों का आकार का स्वरूप इन मंगल प्रतीकों की तरह था।

हमारे यहाँ मन्दिरों में चावल चढ़ाने की प्रथा है जो ऋषभदेव स्वामी के समय से चली आ रही है जिसका वर्णन मैंने अपनी किताब "आदिनाथ ऋषभदेव और अष्टापद" में किया है। मन्दिरों चावल चढ़ाते समय सबसे प्रथम चावल का अर्द्धचन्द्र बनाया जाता है जिसको सिद्धशिला (मोक्षद्वार) का प्रतीक माना गया है। इसके बाद सम्यक दर्शन, ज्ञान चरित्र के प्रतीक के रूप में तीन ढिगली बनायी जाती है और तत्पश्चात् चार गति को दर्शाने वाला स्वस्तिक बनाया जाता है। तिब्बती भाषा में शिव का अर्थ मुक्त होता है और लिंग का अर्थ क्षेत्र। अतः मन्दिर में चावल का अर्धचन्द्र सिद्धशिला के प्रतीक के रूप में अष्टापद या कैलाश क्षेत्र का प्रतीक रूप माना जाता है क्योंकि कैलाश सिद्ध क्षेत्र माना गया है। ऋषभदेव के निर्वाण के पश्चात् इन्द्रों और देवताओं ने वहाँ तीन स्तूप बनाये थे। पहला भगवान का, दूसरा उनके परिवारिक पुत्र और पौत्रों का, और तीसरा अनगारों का जिन्होंने ऋषभदेव के साथ सिद्धगति प्राप्त की थी। इन तीन स्तूपों की प्रतिकृति को हम तीन डिगली के रूप में दर्शाते है। भरत द्वारा बनाये गये 'सिंहनिषधा' प्रासाद के प्रतीक के रूप में स्वस्तिक बनाने की परम्परा भी अष्टापद कैलाश की यादगार के रूप में आज भी हमारी परम्परा में स्वस्तिक के रूप में जीवन्त है। वामन पुराण दो (५४ अ०) में लिखा है—

ततश्चकार शर्वस्य गृहं स्वस्ति कलक्षणम्
योजनानि चतुः षष्टि प्रमाणेन हिरण्मयम्।।२
दन्ततोरण निर्व्यूहं मुक्ताजालान्तरं शुभम्
शुद्ध स्फटिक सोपानं वैडूर्य कृतस्पकम्।।३

Create PDF files without this message by purchasing novaPDF printer (http://www.novapdf.com)

इसके पश्चात् विश्वकर्मा ने भगवान् शिव के लिये स्वस्तिक लक्षण वाला गृह निर्मित किया था। जो हिरण्यमय था और प्रमाण में चौंसठ योजन के विस्तार वाला था।।२

उस गृह में दन्त तोरण थे और मुक्ताओं के जालों से अन्दर शोभित हो रहा था जिसमें शुद्ध स्फटिक मणि के सोपान (सीढ़ियाँ) थीं जिनमें वैडूर्य मणि की रचना थी।।३

विविध तीर्थ कल्प में श्री जिनप्रभ सूरि जी ने लिखा है— इसी पर्वत पर गौतम स्वामी ने 'सिंहनिषद्या' चैत्य के दक्षिण द्वार से प्रवेश कर पहले संभवनाथ आदि चार प्रतिमाओं को वन्दन किया। फिर प्रदक्षिणा देते हुए पश्चिम द्वार से सुप्रार्श्वादि आठ तीर्थंकरों को, फिर उत्तर द्वार से धर्मनाथदि दश को, फिर पूर्व द्वार से ऋषभदेव अजितनाथ जिनेश्वरद्वय को वन्दन किया।

श्री धनेश्वर सूरि कृत शत्रुञ्जय महामात्य में लिखा है—इधर भरत ने भी चिता के पास की जमीन पर वर्द्धकी रत्न द्वारा भगवान् का एक प्रासाद बनवाया। तीन कोस ऊंचे और एक योजन विस्तृत उस मन्दिर में तोरणों से मनोहर ऐसे चार दरवाजे बनवाए।

सिद्धाणं बुद्धाणं सूत्र में यह वर्णन मिलता है आदि भगवान ऋषभदेव के निर्वाण के बाद वहाँ स्तूप तथा 'सिंहनिषधा' पर्वत पर भरत चक्रवर्ती बनाये गये जिनालय में दो, चार, आठ, दस के क्रम से कुल चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमाओं की स्थापना की गयी।

गौतम रास में वर्णन है कि श्री गौतम स्वामी ने अष्टापद पर चक्रवर्ती भरत द्वारा निर्मापित एवं तोरणों से सुशोभित तथा इन्द्र आदि देवताओं के पूजित, अर्चित नयनाभिराम चतुर्मुखी प्रासाद में प्रवेश किया।

Create PDF files without this message by purchasing novaPDF printer (http://www.novapdf.com)